नईदुनिया

संपादकीय

केजरीवाल के खानपान का हिसाब

अजीब है कि दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल को लेकर चर्चा का मुख्य बिंदु यह हो गया है कि वे अपने भोजन में क्या-क्या और क्यों खा रहे हैं! हालत यह है कि अदालत में मुकदमे के समांतर उनके खानपान को लेकर बहस हो रही है। एक ओर प्रवर्तन निदेशालय यानी ईडी का कहना है कि केजरीवाल जेल में जानबूझ कर ऐसा खाना खा रहे हैं, जिससे उनके शरीर में शर्करा का स्तर बढ़ जाए, और बीमारी के बहाने वे जमानत पर जेल से बाहर निकल आएं।

केजरीवाल ने अदालत में ईडी के दावों को खंडन किया कि वे रक्त में शर्करा का स्तर बढ़ाने के लिए आम और मिठाई नहीं खा रहे हैं। इस मसले पर खींचतान का अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि अब सफाई के तौर पर कहा जा रहा है कि केजरीवाल के घर से अड़तालीस बार खाना आया, उसमें केवल तीन बार आम आए थे। जाहिर है, इस बात का हिसाब रखा, देखा और परखा जा रहा है कि कितनी बार और क्या-क्या खाना आया और उसका शरीर पर क्या असर हो सकता है। कभी जेल की चारदीवारी के भीतर आलू-पूड़ी, तो कभी आम या मिठाई खाना या वजन बढ़ना या फिर चिकित्सक की निर्धारित सूची से अलग भोजन करना मुद्दा बन रहा है। ईडी की यह दलील भी हैरान करती है कि केजरीवाल कुछ खास चीजें खाकर अपने शरीर में किसी ज्यादा बड़ी दिक्कत को न्योता दे रहे हैं, ताकि उन्हें जमानत मिल जाए!

गौरतलब है कि केजरीवाल मधुमेह के मरीज हैं और उन्हें रोजाना इंसुलिन लेनी पड़ती है। उनका कहना है कि उन्हें अपने चिकित्सक से परामर्श करने की इजाजत दी जाए। निश्चित रूप से वे जिस पद और कद के व्यक्ति हैं और यों भी उनकी सेहत के लिहाज से चिकित्सीय परामर्श की सुविधा मिलनी चाहिए। मगर एक पहलू यह भी है कि जेल में रहते हुए उन्हें जैसा भोजन मिल रहा है, वैसा किसी अन्य कैदी को शायद ही मिलता हो। बहरहाल, बेहतर हो कि अरविंद केजरीवाल जिस आरोप में सलाखों के पीछे हैं, सुनवाई और बहस का केंद्र वह हो, न कि उनका खानपान मुख्य मुद्दा बने।

दुनिया को समझना होगा 'माता भूमि, पुत्रोह्म पृथिव्याः' का निहितार्थ

दृष्टिकोण

-कुल भूषण उपमन्यु

आज प्लास्टिक, मिट्टी, पानी, और वायु का प्रदूषक बनता जा रहा है। जमीन पर पड़े हुए प्लास्टिक से धूप के कारण अपर्दन से टूटकर सूक्ष्म कण मिट्टी में मिल जाते हैं और मिट्टी के उपजाऊपन को नष्ट करने का काम करते हैं। पानी में मिल कर मछलियों के शरीर में पहुंच कर खाद्य श्रृंखला का भाग बन कर मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक बन जाते हैं। जलाए जाने पर वायु में अनेक विषैली गैसें वायु मंडल में छोड़ते हैं जिससे वैश्विक तापमान वृद्धि के साथ-साथ मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरे पैदा हो रहे हैं।

प्लास्टिक दैनिक जीवन का ऐसा भाग बन गया है कि इससे बचना बड़ी चुनौती बनता जा रहा है। प्लास्टिक का प्रयोग कम करना, पुनर्चक्रीकरण, और जो बच जाए उसको उत्तम धुआं रहित प्रज्वलन तकनीक से ताप विद्युत बनाने में प्रयोग किया जा सकता है। हालांकि इससे भी थोड़ा गैस उत्सर्जन तो होता है किन्तु जिस तरह शहरी कचरा डंपिंग स्थलों में लगातार लगने वाली आग और गांव में खुले में जलाया जा रहा प्लास्टिक धुआं फैलता जा रहा है उससे तो यह हजार गुणा बेहतर है। स्वीडन ने तो यूरोप के अनेक देशों से सूखा कचरा आयात करके उससे बिजली बनाने का व्यवसाय ही बना लिया है। उसके पास जो तकनीक है, उसमें केवल दशमलव दो (.2) प्रतिशत ही गैस उत्सर्जन होता है। प्लास्टिक के विकल्प के रूप में पैकिंग सामग्री तैयार करना नवाचार की दूसरी चुनौती है। गांव में भी अब तो प्लास्टिक कचरे के अंबार लगते जा रहे हैं।

आधुनिक दैनिक प्रयोग की तमाम वस्तुएं प्लास्टिक में ही पैक हो कर आ रही हैं। प्लास्टिक के पुनः चक्रीकरण के लिए यह जरूरी है कि प्लास्टिक और अन्य सूखा कचरा अलग-अलग एकत्र किया जाए। और कबाड़ी को दिया जाए। जो बच जाए उसे निबटाने के दुसरे सुरक्षित तकनीकी उपायों की सरकारें व्यवस्था करें। एक विचार यह भी जोर पकड़ रहा है कि जो पैदा करे वही कचरे के प्रबंधन का जिम्मेदार ठहराया जाए ताकि ये पैकिंग करके सामान बेचने वाली कंपनियां पैकिंग सामग्री एकत्रित करवा कर वापस लें, और रीसाइक्लिंग की व्यवस्था करें।

किन्तु केवल प्लास्टिक ही जलवायु परिवर्तन का कारक नहीं है। रासायनिक कृषि के कारण भी भूमि की जैविक पदार्थ धारण करने की क्षमता समाप्त हो जाति है जिससे कार्बन पदार्थ का भूमि में संचय नहीं होता दूसरा भूमि की उपजाऊ शक्ति भी कम हो जाति है। जैविक कृषि को प्रोत्साहित करके और वैज्ञानिक आधार पर विकसित करके इस समस्या से निपटा जा सकता है। भारत में इस दिशा में कुछ काम होना शुरू भी हुआ है किन्तु इसे अभी तक मुख्यधारा बनाने में सफलता नहीं मिली है। इसके लिए अधिक वैज्ञानिक शोध की जरूरत है ताकि रासायनिक विधि के बराबर ही उत्पादन करके दिखाया जाए और अन्न सुरक्षा की चुनौती पर कोई खतरा आने की चिंता न रहे।

जलवायु परिवर्तन में मुख्य भूमिका ऊर्जा उत्पादन क्षेत्र की है। हमारे देश में कुल विद्युत उत्पादन 428 गीगा वाट है। जिसमें से 71 प्रतिशत कोयले और जीवाश्म ईंधन से हो रहा है। स्वच्छ ऊर्जा उत्पादन 168।96 गीगा वाट है। जिसमें से 42 गीगा वाट जल विद्युत का उत्पादन है। किन्तु जल विद्युत भी जब बड़े बांधों के माध्यम से बनाई जाती है तो जलाशयों में बाढ़ से संचित जैव पदार्थ आक्सीजन रहित सड़न द्वारा मीथेन गैस का उत्सर्जन करते हैं। मीथेन कार्बन डाई आक्साइड से छह गुणा ज्यादा वैश्विक तापमान वृद्धि का कारक है। इसलिए एक सीमा से ज्यादा जल विद्युत का प्रसार भी ठीक नहीं। सौर ऊर्जा एक बेहतर विकल्प के रूप में उभर रही है।

भारत वर्ष में पिछले कुछ सालों में सौर ऊर्जा उत्पादन में अच्छा काम हुआ है। भारत वर्ष में 2030 तक 500 गीगा वाट स्वच्छ उर्जा उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। आशा है इसे हम प्राप्त कर सकेंगे। किन्तु बड़े ऊर्जा पार्क बना कर स्थानीय संसाधनों पर कुछ जगहों पर ज्यादा दबाव पड़ जाता है जिससे कई समुदायों की रोजी-रोटी के संसाधन छिन जाते हैं जिसके विरुद्ध कई आवाजें उठती रहती हैं, और संघर्ष खड़े हो जाते हैं। इन जायज संघर्षों को अकसर शासन और प्रशासन स्थानीय समुदायों की कठिनाई को समझ कर समाधान करने के बजाए उनसे टकराव का रास्ता चुनती हैं और उन्हें देशविरोधी, विकास विरोधी ठहराने के अवास्तविक और अनावश्यक प्रयास करते हैं। जिससे बेगुनाह लोग अत्याचार और शोषण का शिकार हो जाते हैं और समाज में असंतोष बढ़ता है।

हमें याद रखना चाहिए कि विकास का मतलब समावेशी विकास होता है। राष्ट्रीय और बहुराष्ट्रीय कंपनियों तक ही विकास का मुख्य लाभ पहुंचने से आय का न्यायपूर्ण बंटवारा नहीं हो सकता। अतः उत्पादन का यथा संभव विकेन्द्रित तरीका ही अपनाया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए भारत में 6 लाख के लगभग गांव हैं। यदि हर गांव में एक मैगा वाट सौर उर्जा उत्पादन घर की छतों पर और बेकार जगहों पर किया जाए तो बिना किसी एक जगह संसाधनों पर बड़ा दबाव बनाए 6 लाख मेगा वाट बिजली का उत्पादन हो सकता है।उत्पादन के इस तरीके से लाखों लोगों को रोजगार और स्व रोजगार के अवसर पैदा हो सकते हैं। अतः जरूरत टकराव की नहीं बल्कि विचार आदान-प्रदान की है। कौन विचार कितना करणीय है यह अपने देश की स्थितियों के अनुरूप तकनीकों के नवाचारों को प्रोत्साहित करके देखा जा सकता है। जलवायु परिवर्तन के कारण जिस तरह की अतिवृष्टि, ओलावृष्टि, ग्लेशियर पिघलने की, रेगिस्तानों में अभूतपूर्व बारिश की, समुद्री जल स्तर बढने की जो घटनाएं हो रही हैं ये दुनिया भर के लिए चेतावनी हैं। दुबई, इंडोनेशिया, और अफ्रीकी देशों की हाल की बेमौसमी बाढ़ें, यूरोप और अमेरिकी देशों के बेमौसमी बर्फीले तूफान जलवायु परिवर्तन की चुनौतियां हैं। गरीब देशों और कृषि प्रधान देशों पर इसका सबसे ज्यादा हानिकारक प्रभाव पड़ रहा है। गरीब देशों में भी सबसे गरीब लोग ही ज्यादा प्रभावित हों रहे हैं। इस तरह जलवायु परिवर्तन सामाजिक न्याय के लिए भी वैश्विक स्तर पर बड़ी चुनौती बन कर खड़ा है, जिससे निपटने में देर आत्मघाती ही सिद्ध होगी।

पृथ्वी दिवस इस खतरे के प्रति सजग करने का अवसर होता है जिसे गंभीरता से लिया जाना चाहिए। यही भारतीय सभ्यता का संदेश भी है जिसने माता भूमि, पुत्रोह्म पृथिव्याः कह कर मानव को भूमि का पुत्र घोषित किया है। हम मां के वात्सल्य पूर्ण आंचल की रक्षा अपने ही हित के लिए कर सकें अपनी गलतियों को सुधार कर। इस संदर्भ में अतीत के पन्नों पर झांकना जरूरी है। 1962 में राचेल कार्सन ने 'साइलेंट स्प्रिंग' नामक पुस्तक लिखी जिसमें पर्यावरण को कीटनाशकों से हो रहे नुकसान की ओर ध्यान आकर्षित किया गया। कीटनाशकों की कुछ मात्रा अनाजों में आ जाती है और खाद्य श्रृंखला में दाखिल हो जाती है, जिसका दुष्प्रभाव मानवजाति के अतिरिक्त अन्य पशु- पक्षियों पर भी पड़ जाता है जिसके कारण कई पक्षी प्रजातियां लुप्त हो रही थीं, जिनके बिना वसंत का सौन्दर्य ही समाप्त हो रहा है।

मुस्लिम अपराधियों और माओवादी हिसकों से राजनीतिक सद्भाव के मायने

नजरिया

-रमेश शर्मा

ऐसा करने वाले कोई दर्जन भर राजनीतिक दल हैं जो इन दोनों विषयों से संबंधित घटनाओं और अपराध पर ऐसे वक्तव्य देते हैं जिनसे लोग अपराध पर नहीं अपितु राजनीति पर चर्चा करने लगते हैं । ऐसे कुछ दलों में तो आपसी राजनीतिक तालमेल भी नहीं है । पर इन दोनों विषयों पर सबकी शैली एक है, एक दूसरे के स्वर में स्वर मिलाते हैं। पता नहीं क्यों इन दलों को अपना हित अपराधियों के प्रति सद्भाव प्रदर्शित करने में क्यों दिखता है।

लुटेरों और अपराधी कबीलों को सेना से जोड़कर कर सत्ता तक पहुंचने का काम मध्यकाल में आक्रांताओं ने किया। लेकिन स्वतंत्रत भारत में भी एक चिंतनधारा ऐसी है जो मुस्लिम समाज में केवल अपराधियों और वनवासियों में माओवादी हिसकों के प्रति सहानुभूति या सद्भाव दिखाकर अपने राजनीतिक लाभ का आकलन करती है । ऐसी झलक किसी एक प्रांत में नहीं अपितु लगभग पूरे भारत में दिखती है । भारत विविधताओं से भरा देश है । यह विविधता भाव, भाषा, भूषा और भोजन में ही नहीं, लोकजीवन की परंपराओं में भी है । यह हम कश्मीर, केरल, कर्नाटक, बंगाल, उत्तर प्रदेश और सुदूर वनवासी अंचल बस्तर के समाज जीवन से समझ सकते हैं। किन्तु इस विविधता के बीच एक सूत्र है जो इन सभी प्रांतों में बिल्कुल एक जैसा दिखाई देता है, वह है माओवादी हिंसक आंतकियों और मुस्लिम समाज से संबंधित अपराधियों के अपराध की गंभीरता को कम करने लिये विषयान्तर करने संबंधी राजनीतिक वक्तव्य।

ऐसा करने वाले कोई दर्जन भर राजनीतिक दल हैं जो इन दोनों विषयों से संबंधित घटनाओं और अपराध पर ऐसे वक्तव्य देते हैं जिनसे लोग अपराध पर नहीं अपितु राजनीति पर चर्चा करने लगते हैं । ऐसे कुछ दलों में तो आपसी राजनीतिक तालमेल भी नहीं है । पर इन दोनों विषयों पर सबकी शैली एक है, एक दूसरे के स्वर में स्वर मिलाते हैं। पता नहीं क्यों इन दलों को अपना हित अपराधियों के प्रति सद्भाव प्रदर्शित करने में क्यों दिखता है। मुस्लिम समाज में डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम जैसे वैज्ञानिक, केके मोहम्मद जैसे पुरातत्व विशेषज्ञ और अब्दुल हमीद जैसे बलिदानी भी हुए। किन्तु इन विभूतियों के लिये वैसी लामबंदी नहीं होती जैसी माफिया डॉन मुख्तार अंसारी और शाहजहां शेख, दो मासूम बच्चों के हत्यारे साजिद, लव जिहाद में हत्या के आरोपी फैयाज और बस्तर के एनकाउंटर में मारे गये नक्सलियों के प्रति देखी गई । मुस्लिम समाज से संबंधित किसी अपराधी या माफिया डान का नाम आते ही कुछ राजनीतिक दल के नेता ऐसे वक्तव्य जारी करने लगते हैं जिनसे या तो अपराध की गंभीरता कम होती है अथवा सुरक्षा बलों की लक्ष्य मूलक कार्रवाई पर प्रश्न उठने लगते हैं ।

यदि हम अतीत में घटी असंख्य घटनाओं को छोड़ दें, जिनमें गोधरा कांड के अपराधियों को बचाने का अभियान, बटाला हाउस एनकाउंटर में मारे गये आतंकवादी के लिये किसी नेता की आंख में आंसू आने की चर्चा, पाकिस्तान प्रायोजित कश्मीर के आतंकवाद में संलग्न आतंकवादियों को भटके हुये नौजवान कहना, पालघर में साधुओं की हत्या पर राजनीति करके हत्याओं की गंभीरता को कम करना, कुख्यात आतंकवादी अफजल की बरसी मनाने और उसमें भारत के टुकड़े होने के नारे लगाने जैसी घटनाएं घटीं हैं, केवल पिछले एक माह के भीतर भारत के विभिन्न क्षेत्रों में घटी कुछ घटनाओं को देखें तो भी इस तथ्य को आसानी से समझा जा सकता है ।

इनमें कश्मीर की तीन टारगेट किलिंग, कर्नाटक में लव जिहाद किलिंग, केरल में लड़कियों के गायब होने और उन्हें धर्म विशेष का प्रचारक बनाने का विवरण सामने आना, बंगाल के संदेशखाली में महिलाओं के सामूहिक शोषण, बस्तर में नक्सलियों और बदायूं में दो मासूम बच्चों के हत्यारे के एनकाउंटर और माफिया डॉन मुख्तार की मौत पर जो राजनीतिक वक्तव्य आये, इन सबमें एक ही शैली है। जिससे अपराधियों और देश विरोधी तत्वों को राजनीतिक परदे में छिपने का अवसर मिला ।

कश्मीर में टारगेट किलिंग और वक्तव्य: अप्रैल में ही कश्मीर में टार्गेट किलिंग की तीन घटनाएं हुईं । आतंकवादियों ने 8 अप्रैल को शोपियां जिले के पदपावन में ड्राइवर परमजीत सिंह की हत्या की, 17 अप्रैल को अनंतनाग में बिहार के प्रवासी मजदूर शंकर शाह की गोली मारकर हत्या की और इसी सप्ताह राजौरी में एक सिपाही के भाई की हत्या की। कश्मीर में ऐसी हत्याओं के पीछे किसका हाथ है और कौन कर रहा है, इन हत्याओं का उद्देश्य क्या है, यह किसी से छिपा नहीं है । इसके तार सीमापार पाकिस्तान से जुड़े माने जाते हैं । ये गतिविधियां देश के सद्भाव, संविधान और मानवता के विरुद्ध तो हैं हीं ये देश विरोध की सीमा में भी आती हैं । फिर भी कश्मीर के दो प्रमुख नेताओं महबूबा मुफ्ती और उमर अब्दुल्ला के वक्तव्यों में हत्यारों के प्रति गुस्सा नहीं सहानुभूति की झलक दिखती है । लगता है कि वे इन अपराधों की गंभीरता से ध्यान हटाकर राजनीतिक बहस खड़ी करना चाहते हैं । पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी की अध्यक्ष महबूबा मुफ्ती ने घटना की निंदा तो की पर साथ ही भाजपा पर हमला बोला और कहा 'इस तरह की घटनाओं का इस्तेमाल देश में मुसलमानों की छवि खराब करने के लिए किया जा रहा है । नेशनल कॉन्फ्रेंस के नेता उमर अब्दुला ने तो यहां तक कहा कि ये तब तक नहीं रुकेगा जब तक न्याय नहीं मिलता। उन्होंने इन घटनाओं को 370 की बहाली से भी जोड़ा। कश्मीर में कौन अन्याय कर रहा है और किसको न्याय चाहिए ? कश्मीर के मूल निवासी तो कश्मीरी पंडित हैं जिन्हें तो खदेड़कर बाहर कर दिया गया । उनके घर मकान सब पर कब्जा कर लिया गया। तो अन्याय किसके साथ हुआ ? यदि भारत के लोग संसार भर के अन्य देशों में जाकर काम कर सकते हैं तो अपने देश के प्रांत कश्मीर में क्यों नहीं कर सकते ? यदि कश्मीर जाकर काम करने का प्रयास करेंगे तो गोली मार दी जायेगी ? उमर अब्दुल्ला क्यों 370 की बहाली चाहते हैं ? यदि भारतीय नागरिक अमेरिका और ब्रिटेन में जाकर बस सकते हैं और संपत्ति खरीद सकते हैं तब देश के ही प्रांत कश्मीर में क्यों नहीं ? सर्दी के दिनों में कश्मीरी नागरिक भारत के कोने-कोने में जाकर शाल बेचते हैं। उन्हें तो कोई कहीं से नहीं भगाता लेकिन कश्मीर में किसी अन्य कोई स्थान नहीं। उन्हें मार डाला जाता है और कुछ राजनेता अपराध की गंभीरता से ध्यान हटाकर घटनाओं को राजनीतिक मोड़ देने का प्रयास करते हैं।

बदायूं और बस्तर में एनकाउंटर पर उठाए गए सवाल: इस माह के भीतर दो चर्चित एनकाउंटर हुये । एक उत्तर प्रदेश के बदायूं में और दूसरा छत्तीसगढ़ के बस्तर में। सुरक्षा बलों ने बदायूं में साजिद नाम के युवक का एनकाउंटर किया जिसने घर में घुसकर दो मासूम बच्चों की हत्या की थी। जब साजिद उस घर में पहुंचा तो उन बच्चों की मां साजिद के लिए चाय बनाने चली गई और ये बच्चे पानी लेकर पहुंचे। साजिद इन दोनों बच्चों की हत्या कर भाग गया। जब पुलिस पकड़ने पहुंची तो साजिद ने पुलिस पर हमला किया, एनकाउंटर हुआ और साजिद मारा गया । इसके लिए सुरक्षा बलों की प्रशंसा की जानी थी लेकिन समाजवादी पार्टी के अखिलेश यादव ने इस एनकाउंटर पर सवाल उठाए और सुरक्षा बलों की भूमिका पर प्रश्नचिह्न लगाए।

आजकल

मालदीव में नया ध्रुव

मालदीव में पिछले वर्ष मोहम्मद मुइज्जू ने राष्ट्रपति चुनाव जीता, तभी साफ हो गया था कि वहां की सत्ता अब नए रास्ते पर बढ़ चली है। अब वहां हुए संसदीय चुनाव में भी मुइज्जू की पार्टी पीपुल्स नेशनल कांग्रेस ने दो तिहाई से ज्यादा सीटों पर बड़ी जीत दर्ज कर ली है। इससे स्पष्ट है कि मालदीव का रुख पहले के मुकाबले बिल्कुल अलग होगा और प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उस पर चीन का असर दिखेगा।

दरअसल, संसदीय चुनाव को मुइज्जू की सबसे बड़ी राजनीतिक परीक्षा के तौर पर देखा जा रहा था। हालांकि मुइज्जू और उनकी पार्टी की राजनीति को देखते हुए पिछले कुछ महीनों के दौरान मालदीव पर चीन के हावी होने को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सकारात्मक नहीं माना जा रहा था और वहां के संसदीय चुनाव पर उसका असर पड़ने की उम्मीद की जा रही थी। मगर ऐसा नहीं हुआ। अब मालदीव में मुइज्जू की पार्टी की भारी जीत को चीन के समर्थन और भारत के विरोध पर आधारित उनकी नीतियों पर मुहर के तौर पर देखा जाएगा।

गौरतलब है कि राष्ट्रपति का पदभार संभालने के बाद मुइज्जू ने भारत के प्रति अपने पूर्वाग्रहों को छिपाया नहीं और 'भारत को बाहर करो' की नीति पर चलते हुए भारतीय सैनिकों को वापस भेजना शुरू कर दिया था। दूसरी ओर, पर्यटन से जुड़ी अर्थव्यवस्था, खाद्य सुरक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं के लिए भारत पर अपनी निर्भरता को कम करने के साथ-साथ मालदीव ने तुर्किए और अन्य कई देशों के साथ समझौते किए। खासकर चीन के प्रति मुइज्जू का झुकाव सभी जानते हैं।

उनके राष्ट्रपति बनने के बाद मालदीव की कई बड़ी परियोजनाओं का काम चीन की कंपनियों को मिल चुका है। मालदीव और चीन के बीच सैन्य समझौता भी हुआ था। सच यह है कि चीन प्रकारांतर से मालदीव पर अपना नियंत्रण कायम करना चाहता है और इसी वजह से उसे कुछ विशेष महत्त्व देता है। अब वहां की संसद में अपनी पार्टी का बहुमत होने से देश में चीन के निवेश या अन्य सहयोग संबंधी फैसलों को लागू करने में मुइज्जू को कोई बाधा नहीं होगी। मगर मालदीव पर चीन का बढ़ता प्रभाव भारत के लिए चिंता की बात है।

मगर गरीबी है कि हटती ही नहीं गरीबी हटाओ का जुमला

राकेश गांधी

चुनाव आते ही गरीबों के चेहरे कुछ समय के लिए प्रसन्नता से खिल उठते हैं, क्योंकि अंततोगत्वा पांच साल बाद उन्हें याद जरूर कर लिया जाता है। चुनाव के तत्काल बाद ये गरीब राजनीतिक दलों के नेताओं के मानस पटल से हट भी जाते हैं। याद आना अच्छी बात है, पर हैरानी इस बात की भी है कि आजादी के साढ़े सात दशक बाद भी आखिर गरीबी मिट क्यों नहीं रही..? क्यों राजनीतिक दलों ने 'गरीबी हटाओ' नारे को अपना स्थाई जुमला बना रखा है?

गरीबी तो हटती नहीं, पर साल-दर-साल गरीबों का गरीबी में ही जरूर नामोनिशां मिट जाता है। चुनावी समर चल रहा है। अभी तो इन 'गरीबों' की भी पौ बारह है। नेता रोज ही इनकी पूजा-अर्चना व भरपेट खाना पहुंचाने में व्यस्त चल रहे हैं। चुनाव से निपटते ही इन गरीबों को फिर से इन्हीं के हाल छोड़ दिया जाएगा। कुल मिलाकर मुफ्तखोरी की आदत डालकर इन गरीबों को गरीब ही बनाए रखने और सालो-साल इन पर राज करने का सिलसिला बदस्तूर जारी है।

हाल ही में राजनीतिक दलों के घोषणा पत्र जारी हुए हैं। जोर-शोर से आगामी पांच साल में गरीबों के भूखे पेट का उपचार करने की बात की जा रही है। इससे ज्यादा तो कुछ होगा भी नहीं। जब साढ़े सात दशक में भी नहीं हो पाया तो अब क्या उम्मीद की जा सकती है। केवल गरीबी हटाने ही नहीं, हर बार लाखों नौकरियां देने के वादे भी किए जाते रहे हैं। ये बात अलग है कि पांच साल बाद भी हालात जस के तस ही रहते हैं और फिर शुरू हो जाता है जुमलों का दौर। इससे भी दुःखद तो ये है कि आजादी के बाद से लोगों को पानी, बिजली, सड़क, उच्च शिक्षा व बेहतर चिकित्सा जैसी बुनियादी सुविधाएं जुटाने के भी वादे किए जाते रहे हैं।

इसके उलट आजादी के 77 साल बाद भी देश में ऐसे कई शहर व गांव मिल जाएंगे, जहां डामर की सड़क तो छोड़ो, अभी कच्ची सड़क तक नसीब नहीं हुई है। घटिया सीवरेज व्यवस्था के कारण बरसात के दिनों में शहरों में लोग कई-कई दिनों तक पानी से घिरे घरों में कैद रहते हैं। पीने को पर्याप्त पानी नहीं मिलता। कई गांवों में यातायात के साधन तक नहीं पहुंच पाए हैं। देश की सिलिकॉन सिटी बेंगलुरु जैसे प्रमुख शहर के लोग जब पेयजल संकट के भयानक हालात से जूझ रहे हैं तो दूरदराज के गांवों की क्या बात करें। हां, पिछले कुछ सालों में सारे देश में हाई-वे जरूर बने हैं। लिंक रोड से लोगों का आवागमन सुगम हुआ है। पर इसमें भी गरीब तो अभी भी गरीब ही है। उसकी गरीबी का निवारण अभी तक भी नहीं हो पा रहा है। इसमें किसी एक राजनीतिक दल को दोष देने से कुछ होना भी नहीं है। देश में आमूलचूल परिवर्तन की जरूरत है।

सालों-साल झूठे वादे करने वालों से बचने की जरूरत है। वैसे भी देश में किसी नागरिक को 'गरीब' कहना किसी गाली से कम नहीं है। गरीब का मतलब केवल निर्धन ही नहीं, बल्कि उन्हें जबरन दरिद्र, कंगाल, दीनहीन, बेचारा, लाचार जैसे शब्दों से नवाजना है। ऐसे में वे जरूरतमंद जरूर हो सकते हैं, पर 'गरीब' तो बिल्कुल नहीं।

हमें ये मान लेना चाहिए कि अब देश में जब तक आखिरी इंसान तक रोजगार, पर्याप्त पेयजल, बिजली, जरूरी चिकित्सा व शिक्षा के संसाधन नहीं पहुंच जाते, तब तक विकास की बात करना बेमानी होगी। हमें ये याद रखना चाहिए कि विख्यात सर्वोदयी व सामाजिक कार्यकर्ता तथा महात्मा गांधी के अनुयायी बाबा विनोबा जीवनपर्यन्त 'अन्त्योदय' की बात करते थे। 'अन्त्योदय' यानी अंत तक उदय। देश के आखिरी आदमी तक विकास की बात उनके इस ब्रह्मवाक्य में निहित थी।

अन्त्योदय आज देश की अहम जरूरत बन गया है। सरकार जब तक इस 'अन्त्योदय' को नहीं अपनाती, तब तक देश को विकसित राष्ट्र नहीं माना जा सकता। देश में अंतरिक्ष विज्ञान, सॉफ्टवेयर डेवलपमेंट, कृषि एवं चिकित्सकीय अनुसंधान के साथ-साथ इस समय प्रत्येक इंसान को आर्थिक, शैक्षिक व शारीरिक रूप से सम्पन्न बनाने पर ध्यान देने की जरूरत है। 'भिखारी मुक्त' नारे के साथ ही सक्षम व सम्पन्न देश के नारे पर ध्यान देने की जरूरत है। तभी भविष्य के चुनावों में गरीबी हटाओ और रोजगार व बुनियादी सुविधाएं जुटाने के झूठे वादों से मुक्ति संभव होगी।